बिलौटे की पसंद

उदयन वाजपेयी

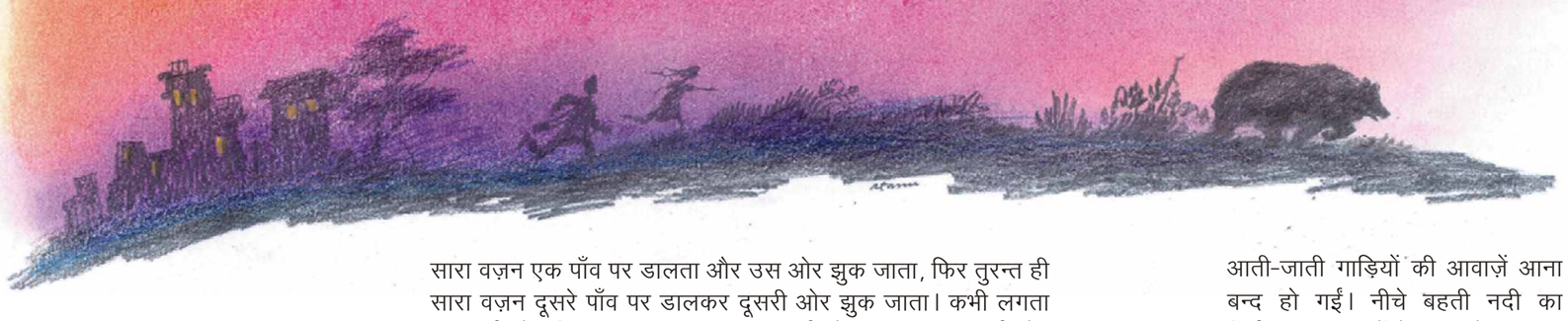

पुलक ने मुझसे कहानी सुनाने को कहा ही था कि हमारे सामने से धीरे-धीरे डोलता-सा भालू निकल गया। मैं पुलक के साथ किताब की दुकान पर बैठा अपनी दोस्त का इन्तज़ार कर रहा था। उसे किसी ने बता दिया था कि मैं कहानी लिखता हूँ। वह बड़ी देर तक यहाँ-वहाँ की बातें करती रही पर जैसे ही उसने मुझसे कहानी सुनाने को कहा, हमारे सामने से धीरे-धीरे डोलता-सा भालू गुज़र गया। दुकान के बाहर की सड़क पर जाने कहाँ से आकर वह काले धब्बे-सा चला जा रहा था। मैंने पुलक को गोद में उठाया और भालू के पीछे भागा।

"आप मुझे नीचे उतारिए। मैं आपके साथ-साथ दौड़ती चलूँगी।"

वह गोद से नीचे उतर गई। भालू ने अपनी चाल तेज़ कर दी थी। वह लोगों के हुजूम, टेढ़ी-मेढ़ी बसों, चमकदार कारों और तरह-तरह की रंगबिरंगी मोटर साईकिलों के बीच से तेज़ी से चला जा रहा था। कभी वह अपना सारा वज़न एक पाँव पर डालता और उस ओर झुक जाता, फिर तुरन्त ही सारा वज़न दूसरे पाँव पर डालकर दूसरी ओर झुक जाता। कभी लगता वह दाईं ओर गिर जाएगा, कभी लगता बाईं ओर। पर वह न दाईं ओर गिरता, न बाईं ओर, बस धड़ल्ले से चलता जाता। हर कदम पर ज़रा-सा उछलते हुए मानो उसके पाँवों में अदृश्य स्प्रिंग लगी हों। पुलक के पाँव की पायल से आती महीन आवाज़ भीड़ के शोर में सुनहली रेखा-सी महसूस हो रही थी। आश्चर्य था कि ऐसे ऊँचे-पूरे उछल-उछलकर चलते भालू की ओर एक भी आदमी देख नहीं रहा था। वह सब के बीच से किसी अनदेखी छाया की तरह गुज़र रहा था।

"यह जा कहाँ रहा है?" दौड़ती हुई पुलक बोली।

उसके बाल माथे पर बिखर आए थे, फ्रॉक के फीते खुलकर उसके दोनों ओर तिब्बती झण्डों की तरह फरफरा रहे थे। हम पुल पर आ गए थे। मेरा मन नीचे बहती नदी को थोड़ी-सी देर देखने का हो रहा था पर पुलक का दौड़ते रहना मुझे खींच रहा था।

"क्या थोड़ा रुक जाएँ?" मैं पुल पर रुकते हुए बोला।

"तब तो भालू बहुत आगे निकल जाएगा।" वह बोली। पर जैसे ही उसने भालू की ओर देखा, वह भी पुल की दीवार से टिककर मानो कुछ देर सुस्ताने, खड़ा हो गया था।

"देखो, देखो वो रुक गया।" पुलक खुशी से चीखी।

हम कुछ देर के लिए रुक गए। हमने जैसे ही नीचे देखा, पुल के ऊपर आती-जाती गाड़ियों की आवाज़ें आना बन्द हो गईं। नीचे बहती नदी का निर्मल जल पत्थरों के बीच से बह रहा था। जल के नीचे नदी तल की बालू के कण डूबते सूर्य की किरणों को अपने पर लपेटकर चमक रहे थे। रह-रहकर झिलमिलाती नदी के किनारे एक चरवाहा अपनी पगड़ी पर सिर रखकर सो रहा था। उसकी गाएँ ज़रा-सी दूर बैठीं जुगाली कर रही थीं। वे दिनभर की थकान मिटा रही थीं।

"देखो, देखो वो चल दिया!" पुलक मेरा हाथ हिलाते हुए कह रही थी। हम दोबारा चल पड़े। भालू पुल पार कर एक लम्बी-सी गली में घुस गया। गली के दोनों ओर लकड़ी के बन्द दरवाज़े थे और कहीं किसी भी मनुष्य का नाम ओ निशान न था। सिर्फ एक गधा आड़ा खड़ा था मानो वह वहाँ के सूनेपन पर विचार कर रहा हो। बड़ी सफाई से भालू उसके बगल से गुज़र गया। शायद गधे को इसकी खबर तक नहीं हुई। हम दीवार से सटकर आगे बढ़े। यहाँ न शहर का शोर था, न नदी की कलकल। दूर-दूर तक सन्नाटा था। गली घने पेड़ों के झुरमुट में खुलती थी। वह पेड़ों का झुरमुट नहीं, शायद दूर तक फैला जंगल ही था। पेड़ों के नीचे हल्का-सा अँधेरा छाने लगा था। भालू का काला रंग अँधेरे के काले रंग में घुलता-सा लग रहा था। हम अब भालू की जगह हिलते-डुलते अँधेरे का ही पेड़ों की गहराती परछाईयों में पीछा कर रहे थे। हम थोड़ा ही आगे बढ़े होंगे कि मुझे लगा कि भालू के आकार का हिलता-डुलता अँधेरा एक जगह पर खड़ा हो गया है। जब हम उसके करीब पहुँचे, वहाँ कुछ नहीं था। अँधेरा-भालू पेड़ों के बीच कहीं गायब हो गया था। रात फैलने लगी थी। पक्षियों के कलरव के पीछे से झींगुरों का महीन स्वर भी सुनाई देने लगा था। हमारे चारों ओर ऊँचे घने पेड़, कँटीली झाड़ियाँ और उनमें टिमटिमाते जुगनू थे। पुलक मेरे कुछ और करीब चलने लगी थी।

"गोद में आओगी ?" मैं बोला। वह चुपचाप चलती रही। सिर्फ मेरे हाथों पर उसकी पकड़ तेज़ हो गई। हम देर तक चलते रहे, घने पेड़ों के बीच पर हमें कहीं भी भालू दिखाई नहीं दिया।

"लगता है वह जंगल के अँधियारे में गुम हो गया है। तुम्हें डर लग रहा हो तो हम वापस चलें।" मैंने चारों ओर नज़रें दौड़ाकर हारकर कहा।

"अभी और आगे चलो।" वह बोली।

उसका वाक्य पूरा हुआ ही था कि घने पेड़ों, कँटीली झाड़ियों और चमकते जुगनुओं का सिलसिला खत्म हो गया। सामने दूर तक फैला खाली मैदान था जिसके दूसरे छोर पर दस-पन्द्रह पेड़ों का समूह था। आसमान में पूरा चन्द्रमा चमचमा रहा था। सफेद चाँदनी के पार सब कुछ साफ-साफ दिख रहा था। हमने दूर से देख लिया कि दूर लगे पेड़ों के नीचे हमारा भालू खड़ा है। हम उस ओर चले। वह बीच-बीच में ऊपर ताकता और पूरी ताकत से उछलता और भद्द से ज़मीन पर आन गिरता। सँभलता, ऊपर ताकता और फिर पूरी ताकत से उछलता।

"ये क्या कर रहा है ?" पुलक बोली।

"ऊपर की शाख पर शायद शहद का छत्ता होगा।"

हम भालू और पेड़ों के झुण्ड के बिल्कुल पास आ गए। पुलक ने पेड़ की ऊपरी शाख को ध्यान से देखा। वह खुशी से चीख पड़ी, "लगा है, लगा है। लगा है शहद का छत्ता !"

वह गोल-गोल घूमकर नाचने लगी मानो भालू मीठा शहद लाकर उसे ही देने वाला हो। रात बीतती जा रही थी। भालू की कोशिशें शान्त होने को ही नहीं आ रही थीं। मेरे हाथ पर पुलक के हाथ की पकड़ ढीली पड़ रही थी। उसने अपना सिर मेरे पाँव पर टिका लिया और नींद भगाने की कोशिश करने लगी। मैंने उसे गोद में उठा लिया। कुछ देर वह जागने की कोशिश करती रही फिर मेरे कन्धे पर सिर रखकर सो गई।

पुलक जब जागी, भालू का उछल-उछलकर शहद के छत्ते को पाने का प्रयास जारी था। वह पेड़ पर चढ़ने की कोशिश भी करता रहा था। पेड़ के तने पर उसके नुकीले नाखूनों से ढेरों खरोंचें उभर आईं थीं। पूरब के आसमान में सूर्य के आने से पहले हल्की-सी लालिमा फैल चुकी थी। मानो सूर्य उसी लालिमा का पीछा करता आसमान में आने वाला हो। ठण्डी हवा में पक्षियों के झुण्ड रह-रहकर हमारे ऊपर

से गुज़र जाते थे। पुलक कुछ देर आसमान की ओर देखती रही, फिर झटके-से उस ओर देखने लगी जहाँ भालू था। रात भर उछलने और पेड़ पर चढ़ने की कोशिश करते-करते वह थक गया था।

"ये अब और नहीं उछल पाएगा।" मैं बोला। पुलक ने उदास होकर मेरी ओर चेहरा घुमा लिया। हमारे चेहरों को छूती ठण्डी हवा में हल्की-सी नमी थी। शायद कुछ ओस की बूँदें हवा में तैरती रह गई थीं। अचानक पुलक चिल्लाई, "बिलौटा, बिलौटा ये कहाँ से आया?"

कहीं से बिजली की तेज़ी-से एक बिलौटा आया और तुरन्त पेड़ पर चढ़ गया। यह वही पेड़ था जिस पर चढ़ने की भालू रात-भर से कोशिश कर रहा था। भालू ने बिलौटे की ओर अपनी नज़रें घुमाईं। उसकी थकी आँखें अचानक चमकने लगीं।

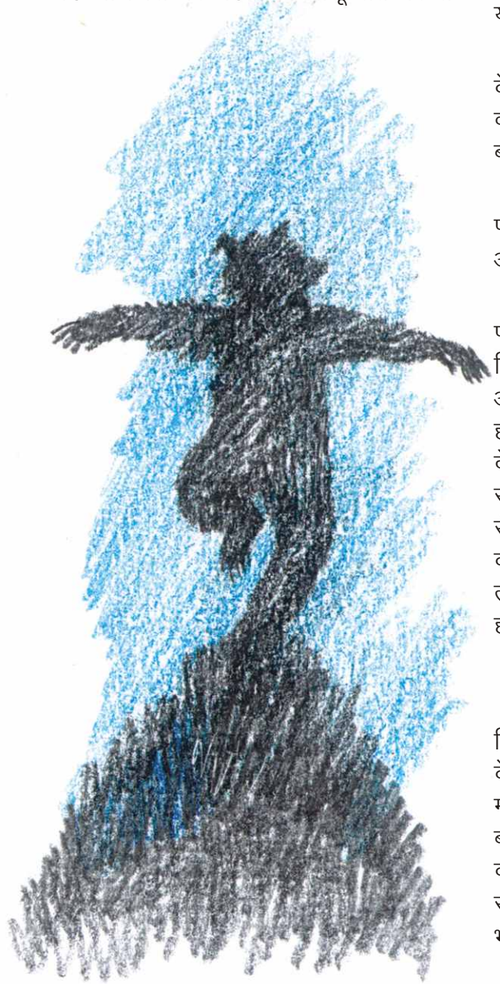

"लगता है बिलौटे को देखकर इसे कुछ सूझ गया है। कहीं यह बिलौटा होना तो नहीं चाहता?" मैं बोला।

आँखें मटकाकर भालू को देखते-देखते पुलक बोली, "इतना सुन्दर, सलौना भालू, यह भला बिलौटा होना क्यों चाहेगा?"

तभी हमने देखा कि वह उठकर खड़ा हो गया है। उसने एक आखिरी बार शहद से भरे छत्ते को देखा और सामने के पहाड़ की ओर चल दिया। कभी लगता वह दाईं ओर गिर जाएगा, कभी लगता बाईं ओर। पर वह न दाईं ओर गिरा, न बाईं ओर। वह जल्दी-जल्दी पहाड़ चढ़ने लगा। हम उसके पीछे भागे। पुलक मेरे आगे दौड़ रही थी। भालू सीधे पहाड़ की चोटी पर जा पहुँचा और एक पैर पर खड़ा हो गया। उसने अपनी दोनों आँखें बन्द कर लीं। पुलक भागकर मेरे पास आ गई और बोली, "ये क्या कर रहा है?"

"लगता है तपस्या कर रहा है। अब इसका पीछा करना बेकार है। ये यहाँ इसी तरह कई दिनों तक खड़ा रहेगा।" मैं बोला।

पुलक बिना कुछ बोले पहाड़ उतरने लगी। हम पहाड़ से उतरकर पेड़ों के समूह, वहाँ से घना जंगल पार करते हुए गली, गली से पुल और पुल से वापस किताबों की दुकान पर आ गए। मेरी दोस्त मेरा इन्तज़ार करने के बाद लौट चुकी थी।

कुछ दिनों बाद पुलक दौड़ती हुई मेरे पास आई। वह सुन्दर सफेद फ्रॉक पहने थी। उसकी दोनों चोटियाँ लाल फीतों में जाकर खत्म हो रही थीं। वह आते ही बोली,"चलें।"

मैं मुस्कुराया, वह भालू को भूली नहीं थी। मैंने उसे गोद में लेना चाहा पर वह मेरे साथ चलने की कोशिश में दौड़ने लगी। हमने पुल पार किया, फिर सूनी गली, फिर जंगल, फिर मैदान, फिर पेड़ों का समूह और आखिरकार हम पहाड़ के नीचे आ गए। हम भागकर पहाड़ पर चढ़ गए। हम उसे जिस पाँव पर खड़ा छोड़ गए थे, भालू उसी पाँव पर खड़ा था। कुछ देर हम उसे देखते रहे, फिर पहाड़ की ढलान पर बैठ गए। ठण्डी हवा बह रही थी। फीका-सा सूर्य आसमान के कोने में टँगा था। अपने फैले पंखों पर सँभली हुई-सी एक चील हल्की धूप पर फिसल रही थी। वह उड़ते हुए कभी नीचे आती, कभी वैसी ही फिसलती-सी ऊपर चली जाती। हम देर तक आकाश में अण्डाकार घेरे में घूमती चील को देखते रहे। पर जैसे ही हमने सामने देखा, वहाँ भालू नहीं था।

पुलक ज़ोर से चिल्लाई, "देखो, देखो वह बिलौटे में बदल गया!"

हमारे सामने एक पाँव पर खड़े भालू की जगह एक पंजे पर खड़ा बिलौटा था। बिलौटे ने धीरे-धीरे अपनी बन्द पलकें खोलीं मानो कई दिनों के बाद किसी ने खिड़की के पलड़े खोले हों। उसने अपने चारों ओर देखा मानो वह सब कुछ पहली बार देख रहा हो। धीरे-धीरे वह हवा में टँगे अपने बाकी तीनों पंजे नीचे लाया और देर तक अँगड़ाई ली। हम हैरान थे। यह क्या हुआ? क्या सचमुच हमारा भालू बिलौटे में बदल गया ? मैं सोच ही रहा था कि वह फिर चिल्लाई, "अरे बिलौटे में बदला हमारा भालू कहाँ भागा जा रहा है?"

हमने देखा, वह बिलौटा पहाड़ उतर रहा है। वह तेज़ी से दौड़ता, फिर रुककर अपने अगले पँजों को बारी-बारी से देखता और फिर दौड़ने लगता। इस तरह दौड़ते और रुकते हुए वह उसी पेड़ के नीचे जा पहुँचा जिसकी शाख पर शहद का छत्ता झूल रहा था। जब हम उस पेड़ के पास पहुँचे, उसने पेड़ पर चढ़ना शुरू कर दिया था।

"अब देखना, यह कैसे तेज़ी से पेड़ पर चढ़ जाएगा।" मैं बोला। बिलौटा बना हमारा भालू पहले सँभलकर पेड़ के तने पर चढ़ा। फिर उसके चढ़ने में थोड़ी तेज़ी आ गई। जल्द ही वह तने से होता हुआ उस शाख तक पहुँच गया जहाँ से शहद का छत्ता लटक रहा था, जिसे कितनी कोशिशों के बाद भी वह तोड़ नहीं पाया था। वहाँ पहुँचते ही उसने अपना अगला बायाँ पँजा शहद से भरे छत्ते में डाल दिया। उसका पँजा शहद से लिथड़ गया।

"अच्छा तो इस चटोरे भालू ने शहद खाने के लिए ही इतनी मेहनत की है।" पुलक बोली। बिलौटे बने भालू के पँजे में लगा शहद नीचे टपक रहा था। वह उसे चाट नहीं रहा था।

"यह शहद खाता क्यों नहीं?" पुलक बोली। सचमुच वह शहद को चाटने की जगह उसे देखे जा रहा था मानो वह कोई अजूबा हो। यही नहीं, वह शहद लगे अपने पँजे को झटक भी रहा था। पुलक चकित थी। मैं भी।

वह बोली, "यह शहद खाने की जगह उसे फेंक रहा है।"

मैं सोचता रहा। अचानक मुझे कुछ सूझा। मैं बोला, "अब यह भालू नहीं बचा। अब यह बिलौटा है और बिलौटे को शहद उतना पसन्द नहीं होता है। अब यह वही खाना पसन्द करेगा जो बिलौटों को पसन्द आता है।"

बिलौटा बना भालू पँजों से शहद झटकते हुए पेड़ से नीचे आने लगा। उसका चेहरा उतर गया था। थोड़ी-सी थकान भी अब वहाँ आ गई थी। हम उसके उतरे हुए चेहरे को देखकर दुखी थे। वह बार-बार पँजे में लगे शहद को अपने मुँह तक लाता और तुरन्त पँजे को झटकने लगता। वह निचली शाख पर आ गया। उसने झुककर नीचे देखा और तभी हमने पाया कि उसकी आँखें चमकने लगी हैं।

सभी चित्रः अतनु राय

पुलक ने सिर घुमाया और चिल्लाई, "लो, ये नया भालू कहाँ से आ गया!"

शहद की सुगन्ध पाकर एक और भालू जंगल से निकलकर पेड़ के नीचे आ गया था और हमारे भालू की तरह ही ऊपर की शाख पर लगे शहद के छत्ते को तोड़ने के लिए उछलने लगा था। उसे उछलता देख बिलौटे में तब्दील हमारा भालू खुश हो सकता था पर साथ ही उदास भी हो सकता था। वही वह हो रहा था।

नए भालू ने पेड़ से उतरते बिलौटे को ध्यान से देखा और फिर शहद के छत्ते को तोड़ने के लिए उछलने लगा।